(कवित्त)

प्रीतम सुजान मेरे हित के निधान कहौ
कैसे रहैं प्रान जौ अनखि अरसायहौ ।
तुम तौ उदार दीन हीन आनि पर्यौ द्वार
सुनियै पुकार याहि कौ लौं तरसायहौ ।
चातिक है रावरो अनोखो मोह आवरो
सुजान रूप-बावरो, बदन दरसायहौ ।
बिरह नसाय, दया हिय मैं बसाय, आय
हाय ! कब आनँद को घन बरसायहौ ॥१२॥

प्रकरण—विरहिणी का प्रिय के पास संदेश । प्रिय को संमुखीन करने के लिए अपनी वेदना का निवेदन । प्रिय हित का खजाना है । प्रिय यदि नहीं आता तो प्राणों का बचना संभव नहीं । बिना कोश के प्राणों के पोषण की व्यवस्था कठिन है । स्वयम् वित्तहीन होने से उसी कोश का सहारा है ।

दूसरों का द्वार छोड़कर प्रिय के द्वार पर ही डेरा दे रखा है और उनके रूप के दर्शन के लिए व्याकुल है। प्रार्थना है कि कृपा कर दर्शन दें और आनंद की वृष्टि से कृतार्थ करें।

चूर्णिका—प्रीतम = प्रियतम, अति प्रिय। हित = भलापन, प्रेम। निधान = खजाना, कोश, आधार। अनखि = रूठकर। अरसायहौ = (मिलन में) आलस्य करेंगे। आनि = आकर। याहि = इन प्राणों की, पपीहों को। कौ लौं = कब तक। रावरो = आपका। मोह-आवरो = मोह में व्याकुल। रूप-बावरो = रूप पर पागल, मुग्ध। बदन = मुख। दरसायहौ = दिखाओगे। नसाय = नाश करके, दूर करके। दया बसाय = (हृदय) में दया बसाकर, दया करके।

तिलक—हे प्रियतम सुजान, आप ही मेरे हित के कोश हैं। फिर कहिए यदि आप ही रूठकर आने में आलस्य करें तो मेरे ये प्राण कैसे जीते रह सकते हैं (इन प्राणों के पोषण के लिए जिस कोश की आवश्यकता है वह तो आपके पास है, इनके पास तो कुछ है ही नहीं)। ये दीन हीन आप ही के द्वार पर आकर पड़े हैं, आप उदार भी हैं (मेरे कोश के अतिरिक्त अपने पास से भी दीनता हीनता का विचार करके कुछ देने की शक्ति रखते हैं) (यदि यह कहें कि मुझे पता नहीं तो भी ठीक नहीं) ये पुकार कर रहे हैं, आप उस पुकार को सुनें, यह निवेदन है। इस प्राण पपीहे को कब तक तरसाते रहेंगे। यह आप ही का चातक है (किसी दूसरे के द्वार पर पुकार करने यह न जाएगा)। यह विलक्षण बाने का है और आपके ही मोह में व्याकुल है। यह आपके रूप पर पागल है। (केवल आपके मुख की छटा ही मिल जाय तो इसे संतोष होगा) आप कब दर्शन देंगे। वह समय ही कब आएगा जब आप हृदय से दया करके आकर इसके विरह (ताप) का नाश करते हुए आनंद के घन की वृष्टि करेंगे (इसे आनंदित करेंगे, केवल दर्शन ही न देंगे, इसको पिपासाशांति के लिए रस की वृष्टि भी करेंगे।)

व्याख्या—प्रीतम = आप प्रियतम हैं, सबसे अधिक प्रिय हैं। आपके अतिरिक्त और नहीं जो इसके प्रेम को परितृप्ति कर सके। सुजान = सुजान भी हैं, अजान नहीं हैं। आपको अधिक समझाने की आवश्यकता नहीं है। निधान = आप हित के कोश हैं। सारा हित आप ही में संनिहित है। जिसका

माल-मता किसी महाजन के यहाँ जमा हो, पास में झंझी कौड़ी न हो, वह यदि उससे रूठ जाए, उसे कोश-द्रव्य देने में आलस्य करे तो फिर वह कैसे जी सकता है, उसके पास तो ग्रासाच्छादन के लिए कुछ है नहीं। दीनहीन = दीन वह जो अल्पवित्त है, हीन जिसके पास कुछ रह नहीं गया। प्रेमी यों भी साधारण स्थिति का है और संप्रति उसके पास उसका कुछ रह भी नहीं गया, जो था वह प्रिय के पास है। द्वार = अब प्रिय के द्वार पर ही वह आ डटा है। प्रिय के अतिरिक्त आश्रय के सभी द्वार उसके लिए बंद हैं। प्रिय को उसे देने के लिए कहीं दूर नहीं जाना है, अधिक कष्ट नहीं करना है। केवल द्वार तक आना है। सुनियै = प्रिय अन्यों की बातों को तो कान कर रहा है, पर उसकी पुकार (जो जोर से हो रही है) नहीं सुन रहा है। जान-बूझकर नहीं सुन रहा है, यह कल्पित किया जा सकता है। कौ लौं = कबतक कहकर यह भी व्यंजित किया गया कि बहुत दिनों से पुकार कर रहा है। कुछ आज ही उसने द्वार पर आकर पुकार नहीं की है। रावरो = आप ही का है, कोई दूसरा इसका प्रिय नहीं है। अनोखो = यह विलक्षण है, ऐसा मोह करनेवाला दूसरा न होगा, यह केवल दर्शन चाहता है, इस दर्शन पर अपनी सारी वेदनाएँ निछावर करने को प्रस्तुत है। रूप = सौंदर्य के अतिरिक्त 'रूप' शब्द रुपये की व्यंजना करता है। यह रुपये पैसे पर, किसी अन्य रूप पर मुग्ध नहीं, केवल सुजान के रूप पर मुग्ध है। उस रूप के दर्शन से ही तृप्त हो जायगा, उसे व्यय करने का प्रश्न ही नहीं। विरह नसाय = इसका अन्वय पहली पंक्ति से है, आप यदि आलस्य त्याग कर उठकर उसे देख भर लें तो उसकी तृप्ति हो जाय। दया = हृदय में दया बसाने का अन्वय दूसरी पंक्ति से है। आप उदार हैं, पर दया आपमें देर तक टिकती नहीं। इस दीन के लिए दया को हृदय में बसाने की आवश्यकता है। आय = इसका अन्वय तीसरी पंक्ति से है। आकर बाहर निकलकर, दर्शन दें। प्रत्यक्ष दर्शन दें।

विशेष—इस कवित्त से पारमार्थिक अर्थ का भी संकेत मिलता है, परम भी यह उक्ति लगती है। इसमें रहस्यात्मक संकेत भी कल्पित हो सकता है। 'सुजान' और 'आनँद को घन' शब्द पूर्ववत् श्लिष्ट हैं। सुजान शब्द कृष्ण के लिए सगुण कृष्णभक्ति में बहु प्रचलित है।

झनक अंत्यानुप्रास से इस छंद में भी सुन पड़ती है ।

पाठांतर—'अनोखो' के बदले 'अनोखे'। ऐसी स्थिति में अनोखे मोह का विशेषण हो जायगा। मोह का विशेषण होने से इस मोह की विलक्षणता यही है कि प्रेम का संकेत न मिलने पर भी उपेक्षित होने पर भी प्रेम करने की प्रवृत्ति बनी रहती है।